

पाण्डव पुराण में राजनैतिक स्थिति

कु० रीता बिश्नोई

“पाण्डव पुराण” आचार्य शुभचन्द्र भट्टारक द्वारा वि० सं० १६०८ में रचित जैन पुराण है। इस ग्रन्थ में कौरव-पाण्डवों की कथा का वर्णन जैन मान्यता के अनुसार किया गया है। जैन साहित्य में यह पुराण “जैन-महाभारत” के नाम से प्रसिद्ध है। यद्यपि आचार्य शुभचन्द्र ने महाभारत की कथा को लेकर ही इस पुराण की रचना की है तथापि इसमें वैदिक महाभारत की कथा से पद-पद पर भेद दृष्टिगोचर होता है। महाभारत कथाविषयक ग्रन्थ होने के कारण इस पुराण में स्थान-स्थान पर राजनीति सम्बन्धी बातें स्पष्ट दिखलाई पड़ती हैं। पाण्डव पुराण में हमें राज-तन्त्रात्मक शासन प्रणाली के दर्शन होते हैं। पाण्डव पुराण में राजनीति सम्बन्धी जिन बातों की जानकारी मिलती है वे संक्षेप में इस प्रकार हैं—

राज्य

पाण्डव पुराण के अध्ययन से राज्य की उत्पत्ति के जिस सिद्धान्त को सर्वाधिक बल मिलता है वह है सामाजिक समझौता सिद्धान्त। इस सिद्धान्त के अनुसार राज्य देवीय न होकर एक मान-वीय संस्था है जिसका निर्माण प्राकृतिक अवस्था में रहने वाले व्यक्तियों द्वारा पारस्परिक समझौते के आधार पर किया गया है। इस सिद्धान्त के प्रतिपादक अत्यन्त प्राचीन काल से एक प्राकृतिक अवस्था के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं, जिसके अन्तर्गत जीवन को व्यवस्थित रखने के लिये राजा या राज्य जैसी कोई व्यवस्था नहीं थी। इस प्राकृतिक व्यवस्था के विषय में पर्याप्त मतभेद है। कुछ इसे पूर्व-सामाजिक तो कुछ पूर्व-राजनैतिक अवस्था मानते हैं। इस प्राकृतिक अवस्था के अन्तर्गत व्यक्ति अपनी इच्छानुसार प्राकृतिक नियमों को आधार मानकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं। प्राकृतिक अवस्था के स्वरूप के सम्बन्ध में मतभेद होते हुये भी यह सभी मानते हैं कि किसी न किसी कारण मनुष्य प्राकृतिक अवस्था को त्यागने को विवश हुये और समझौते द्वारा राजनैतिक समाज की स्थापना की। पाण्डव पुराण के अनुसार इस अवस्था को त्यागने का कारण समयानुसार साधनों की कमी तथा प्रकृति में परिवर्तन होना^१ था। इन्हीं सङ्कटों को दूर करने के लिये समय-समय पर विशेष व्यक्तियों का जन्म हुआ। इन व्यक्तियों को ‘कुलकर’ कहा गया है^२। इन्होंने हा, मा और धिक्कार ऐसे शब्दों का दण्ड रूप में प्रयोग करके लोगों की आपत्ति दूर की। राज्य की उत्पत्ति का मूल कुलकरों और इनके कार्यों को ही कहा जा सकता है।

राजा

राज्य में राजा का महत्त्व सर्वोपरि है। राजा के अभाव में राज्य की कल्पना नहीं की जा

१. राजनीति विज्ञान के सिद्धान्त (पुखराज जैन) पृ० १००-१०१।

२. पाण्डव पुराण, २।१३९-१४२।

३. पाण्डव पुराण, २।१०७।

सकती है। मनु के अनुसार बिना राजा के इस लोक में भय से चारों ओर चल-विचल हो जाता है इस कारण सबकी रक्षा के लिए ईश्वर ने राजा को उत्पन्न किया^१। कामन्दक के अनुसार जगत् की उत्पत्ति एवं वृद्धि का एकमात्र कारण राजा ही होता है। राजा प्रजा के नेत्रों को उसी प्रकार आनन्द देता है जिस प्रकार चन्द्रमा समुद्र को आल्लादित करता है^२। महाभारत में राजा को समाज का रक्षक बतलाते हुए कहा गया है कि प्रजा के धर्माचरण का मूल एकमात्र राजा होता है। राजा के डर से ही मनुष्य-समाज में शान्ति बनी रहती है। राजा के अभाव में कोई वस्तु निरोपद नहीं रह पाती। कृषि, वाणिज्य आदि राजा की सुव्यवस्था पर ही निर्भर होते हैं। राजा समाज का सञ्चालक होता है उसके अभाव में मनुष्य का जीवन दुःसाध्य हो जाता है^३। पाण्डव पुराण में राजा के महत्त्व को बतलाते हुये कहा गया है कि जैसा राजा होता है वैसी ही प्रजा होती है। यदि राजा धर्माचरण करने वाला होता है तो प्रजा भी धर्म में स्थिर रहती है और यदि राजा पापी होता है तो प्रजा भी पापी हो जाती है और यदि राजा समानवृत्ति का होता है तो प्रजा भी वैसी ही हो जाती है^४। इससे स्पष्ट है कि राजा के आचार-विचार तथा गुण-दोषों का प्रजा पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

जैन आगमों में सापेक्ष और निरपेक्ष दो प्रकार के राजाओं का उल्लेख हुआ है। सापेक्ष राजा अपने जीवन काल में ही पुत्र को राज्यभार सौंप देते थे जिससे गृह-युद्ध की सम्भावना न रहे। निरपेक्ष राजा अपने जीते जी राज्य का उत्तराधिकारी किसी को नहीं बनाते थे। पाण्डव पुराण में प्रथम प्रकार के साक्षेप राजाओं की स्थिति दृष्टिगोचर होती है—आदिप्रभु द्वारा बाहुबली कुमारों को पोदनपुर का राज्य तथा अन्य निन्यानबे पुत्रों को भिन्न-भिन्न देश का राज्य देना^५, राजा सोमप्रभ द्वारा अपने पुत्रों में समस्त राज्य विभक्त करना^६ आदि।

पाण्डव पुराण में राजा के निर्वाचन का आधार प्रमुख रूप से पितृ या वंशानुक्रम ही है।

राज्य व्यवस्था

राज्यशास्त्रों में राज्य को सप्ताङ्ग माना गया है। महाभारत के अनुसार सप्तात्मक राज्य की रक्षा यत्नपूर्वक की जानी चाहिये^७। कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, दण्ड और मित्र ये सात राज्य के अङ्ग होते हैं^८, जिन्हें प्रकृति कहा जाता है, इनके अभाव में राज्य की कल्पना नहीं की जा सकती। इनमें सभी का स्थान महत्त्वपूर्ण है। महाभारत में सभी का महत्त्व समान बताया गया है^९।

१. मनुस्मृति, ७।३।

२. कामन्दक नीतिसार, १।९।

३. महाभारत शान्तिपर्व ६८ अध्याय।

४. पाण्डव पुराण, १७।२६०।

५. पाण्डव पुराण, २।२२५।

६. पाण्डव पुराण, ३।४।

७. महाभारत शान्तिपर्व, ६९।६४-६५।

८. कौटिल्य अर्थशास्त्र, ६।१।१।

९. महाभारत शान्तिपर्व, ६१।४०।

राज्य के जिन सात अङ्गों की बात मनु^१, कामन्दक^२, और कौटिल्य^३ आदि ने की है वे सभी पाण्डव पुराण में पाये जाते हैं। इनमें स्वामी अथवा राजा सर्वप्रमुख हैं।

अमात्य

भारतीय मनीषियों ने मन्त्रियों को बहुत महत्त्व दिया है। मन्त्रियों के सत्परामर्श पर ही राज्य का विकास, उन्नति एवं स्थायित्व निर्भर है। कौटिल्य ने अमात्य का महत्त्व बताते हुये लिखा है कि जिस प्रकार रथ एक पहिये से नहीं चल सकता उसी प्रकार राज्य को सुचारु रूप में चलाने के लिये राजा को भी सचिवरूपी दूसरे चक्र की आवश्यकता होती है^४। शुक्रनीति में कहा गया है कि राजा चाहे समस्त विद्याओं में कितना ही दक्ष क्यों न हो ? फिर भी उसे मन्त्रियों के सलाह के बिना किसी भी विषय पर विचार नहीं करना चाहिये^५। इसी प्रकार मनुस्मृति^६, याज्ञवल्क्यस्मृति^७ रामायण^८, महाभारत^९ आदि ग्रन्थों में अमात्य पद का महत्त्व वर्णित है। पाण्डव पुराण में अमात्य को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। अमात्य राजा को नीतिपूर्ण सलाह देते थे इसलिये इन्हें “युक्ति-विशारद”^{१०} कहा गया है। मन्त्री प्रायः राजा को प्रत्येक कार्य में सलाह देते थे। राजा अकम्पन ने पुत्री सुलोचना के लिये योग्य वर की खोज के लिये मन्त्रियों से सलाह की तथा सिद्धार्थ आदि सभी मन्त्रियों की सलाह से स्वयंवर-विधि का आयोजन किया।^{११} इसी प्रकार राजा द्रुपद ने^{१२} तथा राजा ज्वलनवटी ने^{१३} अपनी-अपनी पुत्री के विवाह सम्बन्ध में मन्त्रियों से सलाह ली। मन्त्रीगण अनेक युक्तियों से राजा की रक्षा भी करते थे। किसी विद्वान् का अमोघजिह्वा नामक आदेश देने पर कि आज से सातवें दिन पौदनपुराधीश के मस्तक पर व्रजपात होगा, चिन्तातुर राजा ने सभी मन्त्रियों से विचार-विमर्श किया तथा युक्ति-निपुण सब मन्त्रियों ने सलाह करके राजा के पुतले को सिंहासन पर स्थापित करके राजा की रक्षा की थी^{१४}।

युद्ध-क्षेत्र में भी मन्त्री राजा के साथ होते थे। जरासन्ध के सेनापति “हिरण्यनाभ” के

१. मनुस्मृति, ९।२९४।
२. नीतिसार, ४.१२।
३. अर्थशास्त्र, ६.१.१।
४. अर्थशास्त्र, १।७।१५।
५. शुक्रनीति, २.२।
६. मनुस्मृति, ७.५४।
७. याज्ञवल्क्य स्मृति, १.३१०।
८. रामायण अयोध्याकाण्ड, १९७.१८।
९. महाभारत सभापर्व, ५.२८।
१०. पाण्डव पुराण, ४।१३१।
११. पाण्डव पुराण, ३।३२-४०।
१२. पाण्डव पुराण, १५।५०-५१।
१३. पाण्डव पुराण, ४।१३।
१४. पाण्डव पुराण, ४।१३१-१३३।

युद्ध में मारे जाने पर मन्त्रियों की सलाह से जरासन्ध राजा, मेचक राजा को सेनापति नियुक्त करता है^१।

पुरोहित

राष्ट्र की रक्षा के लिये पुरोहित को नियुक्त करना भी आवश्यक माना गया है। कौटिल्य के अनुसार पुरोहित को शास्त्र-प्रतिपादित विद्याओं से युक्त, उन्नतशील षडङ्गवेत्ता, ज्योतिषशास्त्र, शकुनशास्त्र तथा दण्डनीतिशास्त्र में अत्यन्त निपुण और दैवी तथा मानुषी आपत्तियों के प्रतिकार में समर्थ होना चाहिये^२। याज्ञवल्क्यस्मृति के अनुसार पुरोहित को ज्योतिषशास्त्र का ज्ञाता, सब शास्त्रों में समृद्ध, अर्थशास्त्र में कुशल तथा शान्ति कर्म में निपुण होना चाहिये^३। मनु के अनुसार भी पुरोहित को गृह्य कर्म तथा शान्त्यादि में निपुण होना चाहिये^४।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि राष्ट्र में धर्म-प्रतिनिधि पुरोहित था। इस पद का महत्त्व वैदिक युग से ही रहा है। पुरोहित का अर्थ है—आगे स्थापित (पुर एवं दधति)^५।

पाण्डव पुराण में पुरोहित को 'पुरोधः' कहा गया है। वैसे तो पुरोहित धार्मिक सत्कार्य करने के लिये नियुक्त होते थे लेकिन राजा दुर्योधन के यहाँ एक ऐसे पुरोहित का उल्लेख भी आया है जो धन के लालच में आकर पाण्डवों के निवास लाक्षागृह को जलाने को तैयार हो जाता है^६।

राजा युधिष्ठिर का धर्मोपदेश करने वाले पुरोहित के रूप में राजा विराट के यहाँ एक वर्ष तक (गुप्त रूप से) रहने का वर्णन भी आया है^७।

सेनापति

राज्य के सप्ताङ्गों में सेनापति का स्थान भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। सेना की सफलता योग्य सेनापति के अधीन होती है। युद्ध भूमि में वह सम्पूर्ण सेना का सञ्चालन करता है। अर्थशास्त्र के अनुसार सेनापति को सेना के चारों अङ्गों के प्रत्येक कार्य को जानना चाहिये। प्रत्येक प्रकार के युद्ध में सभी प्रकार के शस्त्र-शास्त्र के सञ्चालन का परिज्ञान भी उसे होना चाहिये। हाथी-घोड़े पर चढ़ने और रथ सञ्चालन करने में अत्यन्त प्रवीण होना चाहिये। चतुरङ्गी सेना के प्रत्येक कार्य का उसे परिज्ञान होना चाहिये। युद्ध में उसका कार्य अपनी सेना पर पूर्ण नियन्त्रण रखने के साथ ही साथ शत्रु की सेना को नियन्त्रित करना है^८। महाभारत में सेनापति में अनेक गुणों का होना आवश्यक

१. पाण्डव पुराण, १९।६६।

२. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधिकार, प्रकरण ४ अध्याय ४, पृ० २४।

३. याज्ञवल्क्यस्मृति, १.३.१३।

४. मनुस्मृति, ७।७८।

५. यास्क निरुक्त २.१२।

६. पाण्डव पुराण, १२।१३२-१३८।

७. पाण्डव पुराण, १७।२४४।

८. अर्थशास्त्र अधिकार २, प्रकरण ४९-५० अध्याय ३३, पृ० २३७।

माना गया है^१। शक्रनीति में भी^२ सेनापति के आवश्यक गुणों का वर्णन किया गया है। पाण्डव पुराण में सेनापति के मस्तक पर पट्ट बांधने का उल्लेख आया है। चक्रवर्ती जरासन्ध के द्वारा मधुराजा के मस्तक पर चर्मपट्ट बांधने^३, दुर्योधन द्वारा अश्वत्थामा के मस्तक पर सेनापति पट्ट बांधने^४ तथा किसी समय भरत चक्रवर्ती द्वारा जयकुमार के मस्तक पर वीरपट्ट बांधकर^५ सेनापति पद दिये जाने का वर्णन मिलता है। इससे स्पष्ट है कि सेनापति के पद पर अत्यधिक वीर, साहसी, गुणी एवं योग्य व्यक्ति नियुक्त किया जाता था।

दूत

दूत राज्य का अभिन्न अङ्ग है। प्राचीन समय से ही राजनीति में उसने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। महाभारत^६, मनुस्मृति^७ तथा हितोपदेश^८ में दूतों के गुणों का विशद वर्णन है। कौटिल्य ने दूत को राजा का गुप्त सलाहकार माना है। दूत प्रकाश में कार्य करता है जबकि गुप्तचर छिप कर। दूत शब्द का अर्थ है—सन्देशवाहक, जिससे स्पष्ट है कि किसी विशेष कार्य के सम्पादनार्थ ही दूत भेजे जाते थे। पाण्डव पुराण में दूत व्यवस्था का उल्लेख अधिक मिलता है। राजा अन्धकवृष्टि द्वारा पाण्डु व कुन्ती के विवाहार्थ व्यास राजा के पास दूत भेजने^९, द्रुपद राजा का द्रौपदी स्वयंवर के लिये निमन्त्रण पत्रिकायें देकर दूतों को भेजने^{१०} चक्रवर्ती का यादवों के पास दूत भेजने^{११} केशव का कर्ण के पास दूत भेजने^{१२} आदि अनेक उदाहरण पाण्डव पुराण में मिलते हैं।

गुप्तचर

गुप्तचर राजा की आँखें हैं, इन्हीं के द्वारा वह राज्य की गतिविधियों को देखता रहता है। प्राचीन समय से ही गुप्तचरों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कौटिल्य ने कार्यभेद से गुप्तचरों के नौ विभाग किये हैं—कापाटिक, उदास्थित, गृहपतिक, वेदेहक, तापस, स्त्री, तीक्ष्ण, रसद एवं भिक्षु^{१३}। मनुस्मृति^{१४} याज्ञवल्क्यस्मृति^{१५}, एवं महाभारत^{१६} में भी इनका महत्त्व प्रतिपादित है। पाण्डव

१. महाभारत उद्योग पर्व १५।१९-२५।
२. शुकनीति, २.४२२।
३. पाण्डव पुराण, २०।३०४।
४. पाण्डव पुराण, २०।३०६।
५. पाण्डव पुराण, ३।५९।
६. महाभारत, उद्योगपर्व, ३७।२७।
७. मनुस्मृति, ७।६३-६४।
८. हितोपदेश विग्रह, १९।
९. पाण्डव पुराण, ८।१७।
१०. पाण्डव पुराण, १५।५३।
११. पाण्डव पुराण, १९।३९।
१२. पाण्डव पुराण, १९।६१।
१३. अर्थशास्त्र, १।१०।
१४. मनुस्मृति, ७।६६।
१५. याज्ञवल्क्यस्मृति, १।३२७।
१६. महाभारत ६।३६।७।१३।

पुराण में जरासन्ध का द्वारिका में रह रहे पाण्डवों का गुप्त पुरुषों द्वारा खोज कराने का उल्लेख मिलता है^१ ।

राष्ट्र-रक्षा

दुर्ग, प्राकार एवं परिखा

शत्रुओं के आक्रमण से नगर एवं राजा की रक्षा के लिये प्राकार एवं दुर्ग का निर्माण किया जाता था। नगर की सुरक्षा की दृष्टि से उसके चारों ओर एक ऊँची सुदृढ़ दीवार बनायी जाती थी जिसे प्राकार कहा जाता था। पाण्डव पुराण में अत्यधिक ऊँचे प्राकार बनाने का उल्लेख आया है। हस्तिनापुर नगर के प्राकार के शिखरों पर ताराओं का समूह जड़े हुए मोतियों के समान सुशोभित हो रहा था^२। इस वर्णन से ही इस प्राकार की ऊँचाई का अनुमान लगाया जा सकता है। नगर की सुरक्षा के लिये उसके चारों ओर परिखा या खाई खोदी जाती थी। हस्तिनापुर नगर की खाई शेषनाग के द्वारा छोड़ी हुई विष पूर्ण, मणियुक्त और भय दिखाने वाली मानों काञ्चल ही प्रतीत होती थी^३। एक अन्य स्थान पर चम्पापुरी नगर की खाई की तुलना पाताल की गहराई से की गयी है^४। शत्रु के आक्रमण के समय नगर-द्वार को बन्द करने का वर्णन भी आया है^५। पाण्डव पुराण में दुर्ग का उल्लेख कहीं नहीं आया है। पतञ्जलि के अनुसार दुर्ग बनाने के लिये ऐसी भूमि ढूँढी जाती थी, जिसमें परिखा बन सके^६। क्योंकि पाण्डव पुराण में परिखा का वर्णन मिलता है इससे स्पष्ट है कि दुर्ग भी अवश्य होते होंगे। उनका वर्णन नहीं किया गया है।

सेना

किसी भी राज्य का आधार कोष एवं सेना माने गये हैं। राजा की शक्ति सैन्य बल पर ही प्रभावशाली बन पाती है। प्राचीन काल से ही राजशास्त्र-प्रणेताओं ने बल का महत्त्व स्वीकार किया है। कौटिल्य के अनुसार राजा को दो प्रकार के कोषों से भय रहता है पहला—आन्तरिक कोष, जो अमात्यों के कोष से उत्पन्न होता है, दूसरा बाह्य कोष, जो राजाओं के आक्रमण का है। इन दोनों कोषों से रक्षा सैन्य बल से ही हो सकती है। पाण्डव पुराण में चतुरङ्गिणी सेना (बल) का उल्लेख अनेक स्थानों पर है। चतुरङ्गबल के अन्तर्गत हस्ति-सेना, अश्व-सेना, रथ-सेना तथा पादाति सेना आती है। राजा श्रेणिक महावीर प्रभु के दर्शनार्थ वैभार पर्वत पर चतुरङ्ग सेना के साथ पहुँचते हैं^७। इसी प्रकार राजा पाण्डु वन क्रीडा के लिये चतुरङ्ग सेना के साथ वन के लिये प्रस्थान करते हैं^८। युद्ध क्षेत्र में तो शत्रु राजाओं से युद्ध करते समय चतुरङ्गिणी सेना का

१. पाण्डव पुराण, १९।२६।

२. पाण्डव पुराण, २।१८५।

३. पाण्डव पुराण, २।१८६।

४. पाण्डव पुराण, ७।२७०।

५. पाण्डव पुराण, २१।१३०।

६. पतञ्जलि कालीन भारत, पृ० ३८१।

७. पाण्डव पुराण, १।१०५।

८. पाण्डव पुराण, ९।२-६।

प्रयोग होता था लेकिन सुलोचना के स्वयंवर में जयकुमार के वरण करने पर अर्ककीर्ति कुमार तथा जयकुमार के बीच हुये युद्ध में चतुरङ्ग सेना का उल्लेख आया है^१। इसी प्रकार द्रौपदी स्वयंवर के समय पाण्डव-कौरवों के बीच हुये युद्ध में चतुरङ्ग सेना का वर्णन आया है^२। इससे स्पष्ट है कि राजा लोग हर समय युद्ध के लिये तैयार रहते थे तथा सेना हमेशा सुसज्जित एवं तत्पर रहती थी।

इन चतुरङ्ग सेना के अतिरिक्त पाण्डव पुराण में विद्याधर सेना^३ तथा अक्षौहिणी सेना^४ का उल्लेख भी आया है।

युद्ध-प्रणाली

पाण्डव पुराण में प्राप्त युद्ध सम्बन्धी वर्णन प्राचीन काल से चली आ रही धर्मयुद्ध की परम्परा की है। पाण्डव पुराण के युद्ध वर्णन से स्पष्ट है कि प्रायः रात्रि में युद्ध रोक दिया जाता था^५। लेकिन बीसवें पर्व में एक स्थान पर कहा गया है कि योद्धागण रात्रि में और दिन में हमेशा लड़ते रहते थे और जब उन्हें निद्रा आती थी तब वे रणभूमि में ही इधर-उधर लुढ़कते थे और सो जाते थे फिर उठकर लड़ते थे और मरते थे^६। युद्ध के समय उचित-अनुचित, मान-मर्यादा का पूरा ध्यान रखा जाता था। युद्ध भूमि में द्रोणाचार्य के उपस्थित होने पर अर्जुन शिष्य का गुरु के साथ युद्ध करना अनुचित बतलाते हैं तथा मर्यादा का पालन करते हुये, गुरु के कहने पर भी वे गुरु से पहला बाण छोड़ने को कहते हैं^७। पितामह भीष्माचार्य के युद्ध भूमि में पृथ्वी पर गिर पड़ने पर दोनों पक्षों के सभी राजा रण छोड़कर आचार्य के पास आ जाते हैं^८। इससे स्पष्ट है कि बड़ों का मान-सम्मान युद्ध भूमि में भी किया जाता था।

पाण्डव पुराण के युद्ध वर्णनों में प्रायः अनेक प्रकार के दिव्य अस्त्र-शस्त्र प्रयोग करने का उल्लेख आया है—उदाहरणतः शासन देवता से प्राप्त नागबाण^९, उत्तम दैवी गदा^{१०}, जलबाण, स्थल बाण तथा नभ बाण^{११}। विद्या के बल से भी युद्ध किया जाता था। इस सन्दर्भ में माहेश्वरी विद्या^{१२}, बहुरूपिणी, स्तम्भिनी, चक्रिणी, शूला, मोहिनी^{१३}, भ्रामरी आदि का उल्लेख युद्ध वर्णनों में पाया जाता है।

१. पाण्डव पुराण, ३।८१-८४।

२. पाण्डव पुराण, १५।१३०-१३१।

३. पाण्डव पुराण, ३।१०४।

४. पाण्डव पुराण, १८।१७०, १९।४५, १९।९६।

५. पाण्डव पुराण, २०।३८, १९।१९६।

६. पाण्डव पुराण, २०।२४१।

७. पाण्डव पुराण, १८।१३१-१३४।

८. पाण्डव पुराण, १९।२५१।

९. पाण्डव पुराण, २०।१७६।

१०. पाण्डव पुराण, २०।१३३।

११. पाण्डव पुराण, २०।२८३।

१२. पाण्डव पुराण, २०।३०७।

१३. पाण्डव पुराण, २०।३३०।

पाण्डव पुराण में युद्ध वर्णनों का बाहुल्य है। कवि का युद्ध वर्णन का कौशल अद्वितीय है। युद्ध वर्णनों के पठन अथवा श्रवण मात्र से ही युद्ध की भीषणता का दृश्य आखों के सामने उपस्थित हो जाता है। उदाहरणार्थ— अर्जुन के द्वारा गिराये हुये भग्न रथों से मार्ग रुक गया तथा जिनकी शुण्डायें टूट गयी है और जो दुःख से चिगवाड़ रहे हैं ऐसे हाथियों से मार्ग व्याप्त हुआ। रणभूमि में मस्तक रहित शरीर नृत्य करने लगे तथा उनके मस्तकों द्वारा भूमि लाल हो गयी। अगाध समुद्र में तैरने के लिये असमर्थ मनुष्य जैसे उसमें कहीं भी स्थिर नहीं होते वैसे ही योद्धाओं के रक्त के प्रवाह में तैरने वाले मानव कहीं भी नहीं ठहर सके^१।

युद्ध के प्रारम्भ में रण सूचक वाद्य बजाये जाते थे इनमें रणभेरी^२, पाञ्चजन्य शंख^३, देवदत्त शंख^४, दुन्दुभि^५, आदि का उल्लेख आया है। सैन्य में हुये शकुन तथा अपशकुन पर भी विचार करने का उल्लेख पाण्डव पुराण में आया है। मगधपति जरासन्ध के सैन्य में अनेकों दुर्निमित्त हुये जो कि जय के अभाव को सूचित करते थे तब दुर्योधन ने अपने कुशलमन्त्री को बुलाकर इन सब दुर्निमित्तों के बारे विचार किया था^६।

न्याय तथा दण्ड व्यवस्था

न्याय तथा दण्ड व्यवस्था के बारे में पाण्डव पुराण में विशेष उल्लेख नहीं आया है एक स्थान पर केवल इतना कहा गया है कि श्रीवर्मा राजा ने अपने चार ब्राह्मण मन्त्रियों को, जो कि अकम्पनाचार्य के संघ को तथा श्रुतसागर मुनि को मारने के लिये उद्यत हुये थे, गधे पर बैठा कर तथा उनके मस्तकों को मुड़वाकर दण्ड स्वरूप उन्हें नगर से बाहर निकाल दिया था^७। इसके अतिरिक्त कहीं पर भी न्याय व दण्ड विधान का कोई भी उल्लेख नहीं आया है।

—द्वारा बलराम सिंह बिश्नोई

२१, पटेलनगर, मुजफ्फरनगर

२५१००१ (उ० प्र०)

१. पाण्डव पुराण, २०।१११-११३।

२. पाण्डव पुराण, ३।८१, १९।३२।

३. पाण्डव पुराण, १९।७७, २०।१६४।

४. पाण्डव पुराण, २१।१२७।

५. पाण्डव पुराण, १५।१२९।

६. पाण्डव पुराण, १९।८२-८५।

७. पाण्डव पुराण, ७।४९-५०।